



National Journal of Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177

NJHSR 2025; 1(58): 281-284

© 2025 NJHSR

www.sanskritarticle.com

गिराज प्रसाद मीणा

शोधार्थी, संस्कृत, दर्शन एवं
वैदिक अध्ययन विभाग-
वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान

शोध निर्देशिका

डॉ. अंजना शर्मा
सह आचार्य, संस्कृत, दर्शन एवं
वैदिक अध्ययन विभाग-
वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान

Correspondence:

गिराज प्रसाद मीणा

शोधार्थी, संस्कृत, दर्शन एवं
वैदिक अध्ययन विभाग-
वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान

भास रचित 'बालचरितम्' के संवादों में रस-निष्पत्ति

गिराज प्रसाद मीणा, डॉ. अंजना शर्मा

सारांश

प्रस्तुत शोध-पत्र महाकवि भास रचित 'बालचरितम्' नाटक की संवाद-योजना के अंतर्गत रस-निष्पत्ति का गहन, आलोचनात्मक एवं नाट्यशास्त्रीय अध्ययन प्रस्तुत करता है। आचार्य विश्वनाथ के सुप्रसिद्ध सिद्धांत "वाक्यं रसात्मकं काव्यम्"¹ को आधार बनाते हुए, यह अध्ययन भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्र के रस-सूत्र—'विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः'² के आलोक में संवादों की रसात्मक क्षमता का परीक्षण करता है। यह पत्र विश्लेषित करता है कि भास ने मात्र आंगिक अभिनय या दृश्य-घटनाओं पर निर्भर न रहकर, वाचिक अभिनय (संवादों) के माध्यम से किस प्रकार वीर, अद्भुत, करुण, रौद्र, भयानक एवं वीभत्स रसों की सफल सर्जना की है। शोध-पत्र यह स्थापित करता है कि भास के संवाद न केवल पात्रों की अंतर्निहित मनोदशा को उद्घाटित करते हैं, अपितु कथानक को नाटकीय गति प्रदान करते हुए सहृदय दर्शकों के चित्त में साधारणीकरण के माध्यम से रसानुभूति उत्पन्न करने में केंद्रीय भूमिका निभाते हैं।

बीज शब्द: महाकवि भास, 'बालचरितम्', रस-निष्पत्ति, संवाद-योजना, वाचिक अभिनय, नाट्यशास्त्र, स्थायीभाव।

१. प्रस्तावना

संस्कृत नाट्य-परंपरा में महाकवि भास अपनी उत्कृष्ट संवाद-योजना और नाटकीय गतिशीलता के लिए विख्यात हैं। संस्कृत साहित्य के इतिहास में भास को उनकी अकृत्रिम और प्रवाहमयी संवाद-शैली के लिए विशिष्ट स्थान प्राप्त है³ उनका नाटक 'बालचरितम्' श्रीकृष्ण की बाल-लीलाओं, उनके अलौकिक चमत्कारों और कंस-वध की कथा पर आधारित है, जो कि महाकाव्यों से प्रेरित होते हुए भी अपनी स्वतंत्र नाट्य-संरचना रखता है⁴ रस-सिद्धांत की दृष्टि से यह नाटक वीर और अद्भुत रस का अनुठा संगम है, जिसमें करुण, रौद्र, भयानक और वीभत्स रस अंगीभूत होकर उभरते हैं। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र के अनुसार वाचिक अभिनय रस-निष्पत्ति का एक सशक्त माध्यम है। भास ने 'बालचरितम्' में संवादों को मात्र सूचना-प्रसारण का साधन न बनाकर, उन्हें पात्रों की भावानुभूति, मानसिक द्वंद्व और रसात्मकता का संवाहक बनाया है।

२. बालचरितम् के संवादों में रस की अभिव्यक्ति: क्रमबद्ध विवेचन

संस्कृत नाट्यशास्त्र में 'वाचिक अभिनय' (संवाद) को रस-निष्पत्ति का प्राण माना गया है। भरतमुनि ने वाचिक अभिनय के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए लिखा है - "वाचि यत्नस्तु कर्तव्यो नाट्यस्यैषा तनुः स्मृता"⁵ अर्थात् नाट्य का वास्तविक शरीर वाचिक अभिनय ही है। महाकवि भास इस कला के अप्रतिम ज्ञाता हैं। भास के संवाद-शिल्प की महत्ता केवल सूचना देने या कथा-प्रवाह को गति देने तक सीमित नहीं है, बल्कि इस बात में निहित है कि वे अपने नपे-तुले और मार्मिक शब्दों के माध्यम से रंगमंच पर सजीव दृश्य और पात्रों के अंतर्मन के गहन भावों दोनों का एक साथ निर्माण करते हैं।

आचार्य आनंदवर्धन के 'ध्वन्यालोक' में प्रतिपादित 'रस-ध्वनि' के सिद्धांत के अनुसार भी शब्दों और वाक्यों की व्यंजना ही रस की वास्तविक अनुभूति कराती है⁶ उनके संवादों की सटीक शब्द योजना, वाक्य-विन्यास और नाटकीय आवेग इतने मनोवैज्ञानिक हैं कि वे पात्र की मानसिक दशा को सीधे

सहृदय दर्शक के चित्त तक पहुँचा देते हैं, जिसे मम्मट ने अपने 'काव्यप्रकाश' में शब्द-अर्थ की रसाभिव्यंजक शक्ति माना है⁷। 'बालचरितम्' में श्रीकृष्ण के अलौकिक कृत्य हों, वसुदेव का शोक हो या कंस का दर्प—भास ने प्रत्येक परिस्थिति के लिए संवादों के माध्यम से एक सर्वथा उपयुक्त भावावरण तैयार किया है, जिससे साधारणीकरण की प्रक्रिया अत्यंत सहज हो जाती है। नाट्य-प्रसंगों और विभिन्न रसों के संदर्भ में भास की इसी संवाद-योजना एवं रस-निष्पत्ति की प्रक्रिया का क्रमबद्ध एवं विस्तृत विश्लेषण निम्नलिखित है:-

२.१ वात्सल्य एवं अद्भुत रसः ईश्वरत्व और शिशुत्व का नाटकीय द्वंद्व

महाकवि भास की संवाद-योजना मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मता से परिपूर्ण है, जिसका उत्कृष्ट उदाहरण 'बालचरितम्' के प्रथम अंक में नवजात श्रीकृष्ण को गोकुल ले जाते समय वसुदेव के वाचिक अभिनय में दिखाई देता है। जब वसुदेव बालक के अमानवीय भार की अनुभूति करते हैं, तब उनके संवाद में वात्सल्य एवं अद्भुत रस का विलक्षण संयोग प्रस्तुत होता है - "विन्ध्यमन्दरसारोऽयं बालः पद्मदलेक्षणः। गर्भे यया धृतः श्रीमानहो धैर्यं हि योषितः॥"⁸ नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से इस प्रसंग में वात्सल्य (पुत्र-प्रेम) तथा विस्मय दोनों स्थायीभाव समानांतर रूप से प्रवाहित होते हैं, जो लोकोत्तर चमत्कार के कारण अद्भुत रस में परिणत हो जाते हैं। यहाँ आलम्बन विभाव रूपी शिशु कृष्ण तथा उद्दीपन विभाव रूपी उनका विन्ध्य-मन्दर सदृश अकल्पनीय भार वसुदेव के विस्मय को तीव्र करता है, जिसकी परिणति बालक के अप्रतिम गुरुत्व के शाब्दिक वर्णन तथा देवकी के असीम धैर्य की प्रशंसा जैसे सशक्त वाचिक अनुभावों में होती है। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया के नेपथ्य में हर्ष, वितर्क एवं मति जैसे संचारी भावों का अत्यंत सफल मनोवैज्ञानिक संयोजन हुआ है।

इस लघु किंतु मर्मस्पर्शी संवाद के माध्यम से भास ने बहुआयामी नाटकीय उद्देश्यों की पूर्ति की है। नाटककार ने श्रीकृष्ण के ईश्वरीय तेज, जन्मजात गुरुत्व और अलौकिक बल को बिना किसी बाह्य दृश्य-चमत्कार के, मात्र वाचिक अभिनय और शब्दों की शक्ति से रंगमंच पर सजीव कर दिया है। इसके साथ ही, मातृत्व की गरिमा का सशक्त रेखांकन करते हुए भास ने देवकी को मात्र एक विवश या पीड़ित माता के रूप में नहीं, अपितु एक महातेजस्वी ईश्वरीय सत्ता को धारण करने वाली असाधारण स्त्री के रूप में स्थापित किया है। यह संवाद दर्शक को उस मनोवैज्ञानिक भावभूमि पर ले जाता है, जहाँ उसे मानवीय शिशु-आवरण में छिपी ईश्वरीय सत्ता और उसके लोकरक्षक स्वरूप का प्रथम नाटकीय साक्षात्कार होता है।

२.२ करुण रसः मातृ-शोक और पितृ-वेदना का मनोवैज्ञानिक चित्रण

पुत्र-वियोग की असीम मार्मिकता और नितांत असहाय अवस्था को महाकवि भास ने अपनी सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक संवाद-योजना में अत्यंत सजीवता से पिरोया है। 'बालचरितम्' के प्रथम अंक में नवजात श्रीकृष्ण को गोकुल ले जाते समय, पीछे छूटती हुई देवकी की विदारक दशा का चित्रांकन वसुदेव - "हृदयेनेह तत्राङ्गैर्द्विधाभूतेव गच्छति। यथा नभसि तोये च चन्द्रलेखा द्विधाकृता॥"⁹ कहकर करते हैं, तथा द्वितीय अंक में क्रूर कंस द्वारा राजभवन में आहूत किए जाने पर विगत छह पुत्रों के वध की स्मृति से उनका आर्तनाद फूट पड़ता है - षण्णां सुतानां समुपेत्य नाशं वहन्निदं शोककृशं शरीरम्। आहूयमानोऽकरुणेन राज्ञा गच्छाम्यहं भृत्य इवास्वतन्त्रः¹⁰। नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से इन प्रसंगों में 'शोक' नामक स्थायीभाव की पूर्ण परिपक्वता दृष्टिगोचर होती है। यहाँ विगत छह पुत्रों का नृशंस वध तथा सातवें पुत्र से अनिवार्य वियोग आलम्बन विभाव हैं, जबकि निरंकुश शासक कंस की क्रूरता और उसका क्रोधाग्नि से भरा बुलावा उद्दीपन विभाव का कार्य करते हैं। इसके परिणामस्वरूप वसुदेव का शोक-संतप्त होकर कृश होना, स्वयं को परतंत्र भृत्य के समान अनुभव करना, तथा देवकी का हृदय और शरीर से द्विधा-विभक्त प्रतीत होना जैसे अत्यंत मर्मस्पर्शी वाचिक अनुभाव प्रकट होते हैं, जिनके नेपथ्य में स्मृति, विषाद, दैन्य और ग्लानि जैसे व्यभिचारी भावों का अत्यंत सफल मनोवैज्ञानिक गुंफन हुआ है।

इन संवादों में वसुदेव और देवकी का करुण रस से आप्लुत शोक इतने मार्मिक और स्वाभाविक रूप में अभिव्यक्त हुआ है कि सहृदय दर्शक का साधारणीकरण सहज ही हो जाता है। पश्चिमी और भारतीय नाट्यशास्त्र के तुलनात्मक अध्ययन में विद्वान ए. बी. कीथ भी यह स्वीकार करते हैं कि भास में बिना अत्यधिक भावुक हुए गंभीर करुणा उत्पन्न करने की अद्भुत क्षमता है¹¹। भास की यह संवाद-योजना मात्र विलाप तक सीमित नहीं रहती, अपितु इसके माध्यम से दर्शक के चित्त में एक ओर निस्सहाय वसुदेव एवं देवकी के प्रति प्रगाढ़ सहानुभूति उत्पन्न होती है, तो दूसरी ओर क्रूर कंस के प्रति तीव्र जुगुप्सा और घृणा का भाव जाग्रत होता है। यही सघन करुणानुभूति अंततः आगामी नाटकीय संघर्ष और धर्म-संस्थापना के उद्देश्य को मनोवैज्ञानिक स्तर पर अत्यंत सुदृढ़ आधार प्रदान करती है।

२.३ वीर रसः उत्साह और पराक्रम का चरमोत्कर्ष

'बालचरितम्' नाटक का अंगी और प्रधान रस वीर रस है, जिसे महाकवि भास ने केवल मुख्य नायक श्रीकृष्ण तक ही सीमित न रखकर उनके सहायकों (गरुड, अस्त्र-शस्त्र आदि) के वाचिक अभिनय में भी अत्यंत ओजपूर्ण ढंग से प्रस्फुटित किया है। प्रथम अंक में गरुड का आत्मपरिचय - अहं सुपर्णो गरुडो महाजवः शाङ्गायुधस्यास्य रथो ध्वजश्च। पुरा हि देवासुरविग्रहेषु वहामि भो विष्णुबलेन

विष्णुम्॥¹² तथा पंचम अंक की मल्ल-रंगभूमि में श्रीकृष्ण एवं बलराम के संवादों में यह उत्साह अपने चरम पर पहुँचता है। मल्ल-युद्ध के समय जहाँ बलराम तात्कालिक क्रोध से प्रेरित होकर मल्ल मुष्टिक को ललकारते हैं - प्रविश्य रङ्गं कृतलोहमुष्टिं तं मुष्टिना मुष्टिकमद्य रुष्टम्। हत्वा चरिष्याम्यनिलप्रचण्डः प्रलम्बमम्भोद-मिवान्तरिक्षे॥¹³ वहीं श्रीकृष्ण क्षुद्र लक्ष्यों की उपेक्षा कर सीधे मूल शत्रु कंस के विनाश की घोषणा करते हैं - मर्त्येषु जन्म विफलं मम तानि घोषे कर्माणि चाद्य नगरे धृतये न तावत्। यावन्न कंसहतकं युधि पातयित्वा जन्मान्तरासुरमहं परिकर्षयामि॥¹⁴ नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से इस सम्पूर्ण नाटकीय प्रसंग का स्थायीभाव 'उत्साह' है। यहाँ कंस तथा मल्ल चाणूर-मुष्टिक आलम्बन विभाव हैं, जबकि रंगभूमि का वातावरण और रण-चुनौती उद्दीपन विभाव के रूप में भ्राताओं के उत्साह को उद्दीप्त करते हैं। इसके परिणामस्वरूप वीरोचित गर्वोक्ति, शत्रुओं को ललकारना और लक्ष्य-घोषणा जैसे सशक्त वाचिक अनुभाव प्रकट होते हैं, जिनके नेपथ्य में गर्व, उग्रता, अमर्ष (क्रोध-मिश्रित उत्साह) और धृति जैसे संचारी भावों का निर्बाध मनोवैज्ञानिक प्रवाह है।

इन ओजस्वी संवादों के माध्यम से नाटककार ने अलौकिक पुरुष (कृष्ण) और लौकिक/सामान्य पुरुष (संकर्षण) के दृष्टिकोण का अंतर अत्यंत स्पष्टता से उद्घाटित किया है। विद्वान डॉ. सी. आर. देवधर के अनुसार, भास के पात्रों की संवाद-योजना उनके व्यक्तित्व की मनोवैज्ञानिक परतों को उघाड़ती है, जहाँ कृष्ण की वीरता में एक सुस्पष्ट दर्शन है और संकर्षण की वीरता में तात्कालिक आवेग। भाषा के स्तर पर, इन संवादों में ओज गुण, कठोर वर्णों की सार्थक आवृत्ति और पौरुष का वह अद्भुत सम्मिश्रण देखने को मिलता है, जो सहृदय दर्शक के चित्त में अप्रतिम उत्साह का संचार कर वीर रस की अत्यंत सफल और साधारणीकृत निष्पत्ति करता है।

२.४ रौद्र एवं भयानक रसः प्रतिनायक का दर्प और आसन्न पतन
महाकवि भास ने 'बालचरितम्' में केवल नायक का ही नहीं, अपितु प्रतिनायक (खलनायक) के चरित्र का भी अत्यंत मनोवैज्ञानिक और सशक्त अंकन किया है। 'दशरूपक' में आचार्य धनंजय द्वारा प्रतिनायक को धीरोद्धत, पापी और अहंकारी बताया गया है¹⁵, जो कंस के चरित्र पर पूर्णतः सटीक बैठता है। द्वितीय अंक में राजभवन में अमंगलकारी चाण्डाल युवतियों को देखकर कंस के संवादों में रौद्र (क्रोध) और भयानक (भय) रस का उत्कृष्ट सम्मिश्रण प्रस्तुत होता है - यस्मान्नरक्षिपुरुषाः प्रचरन्ति केचिद् यस्मान्न दीपकधराः प्रमदाश्चरन्ति। तस्मादिमा मम गृहं समनुप्रविष्टा नीलोत्प-लाञ्जननिभा भयदाः श्वपाक्यः॥¹⁶ अपने अंतर्निहित भय को छिपाने और मिथ्या दर्प को पुष्ट करने हेतु वह अहंकार-मिश्रित उद्घोष करता है - क्रोधेन नश्यति सदा मम शत्रुपक्षः सूर्यः शशी हुतवहश्च वशे स्थिता मे। योऽहं यमस्य च यमो भयदो भयस्य तमापवादवचनैः

परिधर्षयन्ति॥¹⁷ तथा तृतीय अंक में वृषभ-रूप धारी दानव अरिष्टर्षभ का संवाद - शृङ्गाग्रकोटिकिरणैः खमिवालिखंश्च शत्रोर्वधार्थमुपगम्य वृषस्य रूपम्¹⁸ भी इसी उग्रता को पुष्ट करता है। नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से इन संवादों में 'क्रोध' (रौद्र रस) तथा 'भय' (भयानक रस) स्थायीभाव के रूप में समानांतर कार्य करते हैं। यहाँ अमंगलकारी घटनाएँ, डरावनी चाण्डाल युवतियाँ और शत्रु-पक्ष आलम्बन विभाव हैं। इसके परिणामस्वरूप कंस द्वारा आत्म-प्रशंसा करना, दंभपूर्ण उक्तियाँ बोलना और बौखलाहट में प्रलाप करना जैसे सशक्त वाचिक अनुभाव प्रकट होते हैं, जिनके नेपथ्य में उग्रता, मद (अहंकार), त्रास (अचानक उत्पन्न भय) और शंका जैसे संचारी भावों का मनोवैज्ञानिक प्रवाह निरंतर बना रहता है।

शोधपरक दृष्टि से देखा जाए तो कंस और उसके अनुचरों का यह वाचिक अभिनय केवल उनके दर्प का प्रदर्शन नहीं करता, अपितु यह अत्यंत सूक्ष्मता से रेखांकित करता है कि एक अत्याचारी और निरंकुश शासक भीतर से कितना त्रस्त और भयभीत होता है। भास की यह मनोवैज्ञानिक संवाद-योजना प्रतिनायक के मानसिक असंतुलन को रंगमंच पर सजीव कर देती है। यही मनोवैज्ञानिक यथार्थ अंततः उसके भयानक अंत को नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से पूर्णतः औचित्यपूर्ण बनाता है तथा दर्शक के मन में प्रतिनायक के प्रति घृणा उत्पन्न कर कथा के चरमोत्कर्ष के लिए एक सुदृढ़ आधार तैयार करता है।

२.५ वीभत्स रसः अधर्म का विनाश और कंस का पतन

'बालचरितम्' के पंचम अंक के चरमोत्कर्ष में मल्ल-रंगभूमि के भीतर श्रीकृष्ण द्वारा कंस का वध किए जाने के उपरांत, प्रतिनायक के मृत और क्षत-विक्षत शरीर का चित्रांकन भयानक और वीभत्स रस का अत्यंत उत्कृष्ट एवं दृश्यात्मक उदाहरण प्रस्तुत करता है। श्रीकृष्ण के संवाद में कंस के मृत शरीर की यह वीभत्स दशा दृष्टव्य है- विस्तीर्णलोहितमुखः परिवृत्तनेत्रो भग्नांसकण्ठकटिजानुकरो-रुजङ्घः। विच्छिन्नहारपतिताङ्गदलम्बसूत्रो वज्रप्रभग्रशिखरः पतितो यथाद्रिः¹⁹ नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से इस प्रसंग में 'जुगुप्सा' (घृणा) नामक स्थायीभाव पूर्ण परिपाक को प्राप्त होकर वीभत्स रस में परिणत हुआ है। आचार्य मम्मट के काव्यशास्त्रीय निकष के अनुसार भी, जुगुप्सा जब रक्त, मांस और क्षत-विक्षत अंगों के वर्णन से पुष्ट होती है, तब वीभत्स रस की व्यंजना होती है। यहाँ रंगभूमि में निर्जीव पड़ा कंस का रक्तरंजित और क्षत-विक्षत शरीर आलम्बन विभाव है, जबकि उसके भिन्न-भिन्न अंगों का टूटना उद्दीपन विभाव के रूप में कार्य करता है। परिणामस्वरूप, श्रीकृष्ण द्वारा मृत शरीर का सजीव वाचिक वर्णन—जैसे चौड़ा लाल (रक्त-रंजित) मुख और उल्टी हुई (पथराई) आँखें—अत्यंत सशक्त वाचिक अनुभाव के रूप में उभरता है, जिसके नेपथ्य में ग्लानि, त्रास, आवेग और मरण जैसे संचारी भावों का प्रत्यक्ष मनोवैज्ञानिक संचार हुआ है।

शोधपरक दृष्टि से देखा जाए तो भास ने कंस के पतन को मात्र एक भौतिक मृत्यु के रूप में नहीं, अपितु अधर्म के विनाश के साक्षात् वीभत्स प्रमाण के रूप में प्रस्तुत किया है। संवाद की अंतिम पंक्ति में प्रयुक्त वज्र से टूटे हुए पर्वत-शिखर की उपमा न केवल कंस के विशाल शरीर और उसके दर्प के खंडित होने को दर्शाती है, बल्कि यह दार्शनिक सत्य भी स्थापित करती है कि ईश्वरीय सत्ता (श्रीकृष्ण) के प्रहार के समक्ष बड़े-से-बड़ा अहंकार इसी प्रकार वीभत्स गति को प्राप्त होता है। यह दृश्यात्मक संवाद दर्शक के मन में घृणा और विरक्ति का भाव जगाकर नाटक के लोकरक्षक उद्देश्य को पूर्णता प्रदान करता है।

३. संवाद, रस और पात्र-निर्माण

भास की संवाद-कला पात्रों की मनोदशा को रूपायित करती है। वसुदेव के संवादों में वात्सल्य, भय और करुणा का मिश्रण उन्हें एक विवश लेकिन कर्तव्यपरायण पिता बनाता है। धनंजय के 'दशरूपक' के अनुसार कथोपकथन पात्रों की प्रकृति का दर्पण होता है। संवादों का शब्द-चयन पात्रों के बाह्य व्यवहार और आंतरिक भाव के बीच अटूट संबंध स्थापित करता है।

४. संवाद, रस और कथानक-विकास

नाटक में संवाद केवल भावाभिव्यक्ति नहीं करते, अपितु वे नाटकीय गति का निर्माण करते हैं। वसुदेव का अंधकार में प्रलाप और कृष्ण द्वारा प्रकाश की सृष्टि का संवाद घटना को आगे बढ़ाता है। अरिष्टर्षभ और कृष्ण के संवाद नाटकीय तनाव को चरम पर ले जाते हैं, जो नाट्यशास्त्र के संधि-विधान के सर्वथा अनुकूल है।

५. भास की संवाद-कला और दर्शकीय प्रभाव

दर्शकों पर रसात्मक प्रभाव उत्पन्न करने में भास के संवाद पूर्णतः सफल हैं। पुसालकर ने भी भास की संवाद-योजना में अंतर्निहित दृश्यात्मकता और नाटकीय गति को उनकी सबसे बड़ी शक्ति माना है। इनकी प्रमुख विशेषताएँ हैं: दृश्यात्मकता (मंच पर एक पूरा दृश्य साकार हो जाना), भावानुकूल भाषा, तथा मनोवैज्ञानिकता।

६. समग्र मूल्यांकन / निष्कर्ष

निष्कर्षतः, महाकवि भास रचित 'बालचरितम्' केवल घटनाओं का आख्यान नहीं है, बल्कि रसानुभूति की एक मनोवैज्ञानिक यात्रा है। भास ने रस-निष्पत्ति के लिए संवादों को सबसे सशक्त माध्यम बनाया है। संवादों के माध्यम से ही वीर, करुण, अद्भुत और रौद्र रसों का परिपाक हुआ है। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र की यह कसौटी कि वाचिक अभिनय दर्शकों के मर्म को सीधे स्पर्श करता है, भास के इस नाटक में शत-प्रतिशत खरी उतरती है। अंततः, संपूर्ण संवाद योजना पाठक एवं दर्शक को एक ऐसी अलौकिक अनुभूति की ओर ले जाती है जहाँ मानव-रूप में ईश्वर की लीला और उनके लोकरक्षक स्वरूप का सीधा साक्षात्कार होता है।

सन्दर्भ सूची -

1 साहित्यदर्पण, प्रथम परिच्छेद, पृ.सं. 14

2 नाट्यशास्त्रम्, पृ.सं. 285,

3 संस्कृत साहित्य का इतिहास, पृ.सं. 154

4 Bhasa - A Study, पृ.सं. 120

5 नाट्यशास्त्रम्, पृ.सं. 342

6 ध्वन्यालोक, पृ.सं. 82

7 काव्यप्रकाश, पृ.सं. 105

8 बालचरितम् 1.12

9 बालचरितम् 1.13

10 बालचरितम् 2.12

11 The Sanskrit Drama, 105

12 बालचरितम्, 1.21

13 बालचरितम्, 5.7

14 बालचरितम्, 5.6

15 दशरूपकम्, पृ.सं. 67

16 बालचरितम् 2.2

17 बालचरितम्, 2.3

18 बालचरितम्, 3.5

19 बालचरितम् 5.11

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

- भास, बालचरितम्, सम्पादक एवं व्याख्याकार : पं. चंद्रशेखर एवं अनिल कुमार उपाध्याय, नाग पब्लिशर्स, प्रथम संस्करण 2001.
- अभिनवगुप्त. अभिनवभारती. संपा. रामसहाय त्रिपाठी, प्रथम भाग, चौखम्बा विद्याभवन, 1999.
- आनंदवर्धन. ध्वन्यालोक. संपा. आचार्य विश्वेश्वर, ज्ञानमंडल लिमिटेड, 1965.
- उपाध्याय, बलदेव. संस्कृत साहित्य का इतिहास. शारदा मंदिर, 1985.
- धनंजय. दशरूपक. संपा. भोलाशंकर व्यास, चौखम्बा विद्याभवन, 1973.
- भरतमुनि. नाट्यशास्त्र. संपा. पारसनाथ द्विवेदी, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, 1999.
- मम्मट. काव्यप्रकाश. संपा. आचार्य विश्वेश्वर, चौखम्बा विद्याभवन, 1994.
- विश्वनाथ कविराज. साहित्यदर्पण. संपा. शालिग्राम शास्त्री, मोतीलाल बनारसीदास, 1995.
- Devadhar, C. R., editor. Bhasa-Natak-Chakram (Plays Ascribed to Bhasa). Motilal Banarsidass, 1962.
- Keith, A. Berriedale. The Sanskrit Drama in its Origin, Development, Theory and Practice. Oxford University Press, 1924.
- Pusalker, A. D. Bhasa - A Study. Munshiram Manoharlal, 1968.